Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 1 | (Jan – Mar 2026)

संजीव के उपन्यासों में प्रगतिशील चेतना एवं प्रतिरोध का स्वर

लक्ष्मीन चौहान[1], डॉ. (श्रीमती) श्रद्धा चंद्राकार[2]
[1]शोधार्थी, हिन्दी विभाग, शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर, स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)
[2]शोध निर्देशक, सेवानिवृत प्राचार्य

सारांश

हिन्दी साहित्य जगत में समकालीन दौर के बहुप्रतिष्ठित साहित्यकार संजीव का स्थान अग्रणीय एवं अतुलनीय है। सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों तथा समस्याओं को लेकर लेखनी चलाने वाले प्रगतिशील विचारधारा से संबन्धित साहित्यकारों में संजीव का स्थान अन्यतम है। ग्रामीण तथा शहरी समाज में घटित-घटनाओं तथा शोषण का वर्णन इनके उपन्यासों में बखूबी दर्शाया गया है। पीड़ित, दलित, शोषित, उपेक्षित पात्रों का वर्णन कथावस्तु तथा परिवेश के आधार पर जीवंत रूप में पाठक वर्ग के सम्मुख प्रस्तुत किया गया है। इनकी रचनाओं की महत्वपूर्ण विशेषता रही है, शोधपरक रचनाशीलता। इनकी रचनाओं में प्रगतिवाद का स्वरूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। सामंतवाद, जातिवाद, आदिवासियों का विस्थापन, नारियों का शोषण इत्यादि समस्याओं का यथार्थ वर्णन इनके उपन्यासों में देखा जा सकता है। तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मुद्दों व समस्याओं का सजीव वर्णन एवं पात्रों द्वारा प्रतिरोध का स्वर 'अहेर', 'धार', 'जंगल जहाँ शुरू होता है', 'सूत्रधार', 'पाँव तले की दूब', 'फाँस' इत्यादि उपन्यासों में मुखर रूप से देखा जा सकता है। सामाजिक शोषण तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार और कूटनीतिओं का तत्कालीन परिवेश में जो वर्णन किया गया है, वह आज के दौर में भी प्रासंगिक है। निम्नवर्गीय समाज में व्याप्त, जातिवादी मानसिकता व धार्मिक बाह्य आडंबरों को बड़ी ही संजीदगी व बारीकी से इनकी कृतियों में पेश किया गया है।

मुख्य शब्द: प्रगतिवाद, सामंतवाद, जातिवाद, शोषण, प्रतिरोध, अभिव्यक्ति, यथार्थ, आदिवासी, मजदूर, निम्नवर्ग ।

मूल आलेख

मानव सामाजिक प्राणी होने के नाते समाज में घटित-घटनाओं का उत्तरदायी व साक्षी होता है। मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रत्येक वर्ग का इंसान दिन-रात जूझ रहा है। वर्तमान पीढ़ी अपनी-अपनी दैनिक आवश्यकताओं और विकास की चाह में कहीं न कहीं मानवीय व जीवन मूल्य का ह्रास करती जा रही है। वर्तमान दौर में मानवीय संवेदनहीनता का स्वरूप लेखक संजीव अपने उपन्यास में प्रस्तुत करते हैं। संजीव की रचनाओं में मानव-मानव में विभेद के कई कारणों का स्पष्ट उल्लेख देखने को मिलता है। तत्कालीन परिस्थितियों व समस्याओं का वर्णन वर्तमान दौर में घटित समस्याओं को जीवंत रूप प्रदान करती है। मुंशी प्रेमचंद की रचनाओं में वर्णित सामाजिक व राजनीतिक परिस्थितियाँ हमें संजीव की रचनाओं में भली-भाँति देखने को मिलती है। मार्क्सवाद और सामंतवाद की विचारधारा का द्वंद्व संजीव की रचनाओं में देखने को मिलता है।

संजीव सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक पहलुओं को उभारने वाले चितेरे रचनाकार हैं। इनका कथासाहित्य वर्तमान दृष्टिकोण से बेहद प्रशंसनीय है। संजीव का जीवन और संघर्ष उनकी कृतियों में देखा जा सकता है। तथाकथित सभ्य समाज की परिपाटी में बनी रूढ़िवादी विचारधाराओं का खंडन इनकी कृतियों मे उपस्थित है। सामाजिक संघर्ष और राजनीतिक दाव-पेंच में उलझा ग्राम्य तथा शहरी समाज इनके उपन्यासों में आसानी से देखने को मिलता है, जहाँ शासन-प्रशासन की कूटनीतिक षडयंत्रों का शिकार होता निम्नवर्ग है। संजीव के उपन्यासों की विशेषता बताते हुए डॉ. गिरीश काशिद लिखते हैं कि- "उनके उपन्यास कोई यूटोपीया खड़ा नहीं करते जो सोचने को बाध्य करते हैं। मूलतः संजीव

प्रतिबद्ध और जनधर्मी चेतना के पक्षधर हैं। वे एक परिश्रमी एवं बेचैन उपन्यासकार हैं। उन्होने उपन्यासों के माध्यम से हाशिए पर जीवन जीनेवाले, उपेक्षित, पिछड़े, शोषित लोगों की व्यथा को व्यापक धरातल पर प्रस्तुत किया है।"[01]

लेखक ने अपनी प्रथम रचना 'अहेर' में शोषण के विरुद्ध विद्रोह का स्वर भरते हुए जय और चाँदनी जैसे युवा और क्रांतिकारी पात्रों का निर्माण किया हैं। संजीव के पात्र जय और चाँदनी समाज की दोहरी मानसिकता का भरसक प्रतिरोध करतें हैं और समाज में साम्यवादी दृष्टि की स्थापना करना चाहतें हैं। जाति से जय उच्च वर्ग व चाँदनी निम्न वर्ग से संबंध रखते हैं, जिस कारण सामाजिक जातिवादी मानसिकता वाले वर्गों का कोपभाजन इन पात्रों को सहना पड़ता है। चाँदनी और जय समाज में जाति के विरुद्ध जाकर विवाह करतें हैं और अपनी से छोटी जतियों की मदद करतें हैं तथा उनके दुख-दर्द में शामिल हो उनकी समस्याओं का निवारण करते हैं। जय एक निर्भीक और साहसी पात्र के रूप में आया है, जिसे इस उपन्यास का क्रांतिकारी पुरुष पात्र कहा जा सकता है। जय सामाजिक समानता व गरीबों की हक की लड़ाई लड़ता है और भ्रष्ट पुलिस प्रशासन के समक्ष बिना डर और झिझक के प्रतिरोध करता हुआ दिखलाई पड़ता है। संजीव जय द्वारा उठाए जाने वाले प्रतिरोध का स्पष्ट चित्रण करतें हैं, जब जय अन्याय और शोषण के विरुद्ध डी.एस.पी. के समक्ष आवाज उठता है- "मैं पूछता हूँ, हदबंदी के बावजूद सूद के एवज में किसानों की जमीन छीन-छीनकर सैकड़ों बीघे का काश्तकार बने रहना, दिन-दहाड़े गाँव की लड़कियों की इज्जत से खेलना, बेगार लेना, न देने पर पीटना, घर, खेत, खलिहान फूँक देना क्या कानून में अपराध के तहत नहीं आते। आपके विभाग ने तो हर वक्त उन्हीं की सहायता की। शिकायत करने वाले को उल्टे परेशान किया।" [02]

यह जातिवाद और जातिवाद का विष, तत्कालीन परिवेश में तो था ही परंतु आज इक्कीसवीं सदी में भी बराबर चलायमान है। आए दिन जाति से संबंधित समस्याओं के मुद्दे देखने-सुनने को मिलते रहतें हैं। जाति के नाम पर छोटी जतियों को दिए जाने वाले उलाहनें हर निम्न जात के लोगों को सहना पड़ता है। जातिवाद की कुंठित मानसिकता का विरोध नितांत आवश्यक है। जाति से संबंधित रूढ़िवादी विचारों का खंडन और सामाजिक संतुलन का अथक प्रयास लेखक संजीव की रचनाओं में देखने को मिलता है। संजीव का 'सूत्रधार', 'प्रत्यंचा', 'ज्योति कलश' उपन्यासों में जाति की घृणित मानसिकता का वर्णन और विरोध दोनों का चित्रण किया गया है। संजीव जिस प्रकार अहेर उपन्यास में जाति के प्रति विरोध करने वाले पात्रों में जय और चाँदनी का जिक्र करते हैं, ठीक उसी प्रकार जातिवादी मानसिकता के शिकार भिखारी ठाकुर के संघर्षो का बड़ा ही यथार्थ वर्णन 'सूत्रधार' उपन्यास में करतें हैं। 'सूत्रधार' भिखारी ठाकुर के जीवन संघर्ष और लोक प्रसिद्धि के पीछे की यातनाओं, उलाहनाओं को बयां करती हैं। लोक प्रसिद्ध भोजपुरी कलाकार नाऊ जाति होने के कारण समाज में जाति की कड़वी टीका-टिपणीयां सहता है। लेखक ग्रामीण इलाकों में लोगों की जातिवादी मानसिकता का उद्धरण पेश करते हैं। जाति के संबंध में विचार प्रकट करते हुए लेखक संजीव लिखते हैं कि– "टहलुआ...? देखो जात-पात कुछ नहीं होता। एक ही वरण (वर्ण) में सभी वरण हैं। झाड़ा फिरकर पाखाना हाथ से धोते हैं न हम, तब हम भंगी हो जाते हैं, सेवा-मिहनत करते हैं, तब हम शूद्र होते हैं, बाजार में मोल-तोल करते हुए हम बनिया होते हैं, पाखाना धोनेवाले उन्हीं हाथों से हम पुजा करतें हैं तो ब्राह्मण होते हैं और अपनी आन-बान और शान-शेखी के लिए लड़ बैठते हैं तो क्षत्री !" [03]

कथाकार संजीव अपनी कृतियों में वर्गीय विषमता और वर्ग संघर्ष का स्पष्ट व यथार्थ चित्रण करतें हैं। समाज में जाति के प्रति समानता का भाव लाने के लिए अपनी ही बीरादरी और परिवार, समाज से लड़ने वाले महान योद्धा छत्रपति शाहूजी महाराज कि अन्यतम गाथा को संजीव जीवनी के रूप में 'प्रत्यंचा' उपन्यास कि रचना करते हैं। इस उपन्यास में जाति कि लड़ाई और सामाजिक एकता का संदेश देने वाले महाराज छत्रपति शाहूजी कि गाथा का बड़ा ही सुंदर वर्णन देखने को मिलता है। जाति के संबंध में संजीव लिखते हैं कि- "लड़ाई क्या अकेली वही होती है जो युद्ध भूमि में लड़ी जाति है ? प्रत्यक्ष लड़ाइयों से वे लड़ाइयाँ कहीं ज़्यादा खतरनाक होती है जो अप्रत्यक्ष और अमूर्त होती हैं जहाँ एक ही वार में हत्या नहीं कि जाती, बल्कि तड़पा-तड़पा कर पीढ़ी-दर-पीढ़ी कोंचा जाता रहा है।"[04]

लेखक संजीव समाज में सदियों से दबती आ रही निम्न जाति व मजदुरों के शोषण के प्रति वाणी देते हैं। लेखक कि रचनाओं में यथार्थवादी दृष्टिकोण कि झलक देखने को मिलती है। निचले तबके के गरीबों और मजदूरों के साथ हो रहे अन्याय व अत्याचार का प्रतिरोध संजीव कि रचनाओं में वर्णित पात्रों में बड़ी ही सजगता और साहस के साथ देखने को मिलता है। 'धार' उपन्यास में संजीव नारी पात्र का अन्यतम वर्णन करतें हैं। 'धार' उपन्यास की नायिका मैना एक उदाहरण है समाज में, जो न्याय के लिए अपने ही पति और पिता से लड़ जाती है। संजीव मैना को संघर्ष की धार कहतें हैं। मैना की पारिवारिक पृष्ठभूमि में मैना के संघर्ष का चित्र दिखलाई पड़ता है। मैना की माँ को भी समाज डायन कहकर भगा देता है। प्रो. सुवास कुमार मैना को पलाश का पौधा कहतें हैं। पलाश की पौधे की विशेषता बताते हुए मैना के चारित्रिक गुणों का बखान करते हुए लिखते हैं कि – "पलाश का पौधा देखा है? बेहद मजबूत और चिम्ड़ होता है। आप तोड़ नहीं पाएंगे उसे मरोड़-मचोड़ भले ही दें और इसमें फूल कैसे लाल दप-दप दहकते आते हैं। मैना वही पलाश है। लोगों ने पत्तों कि तरह उसकी देह को नोचा-खसोटा जरूर, पर मैना को तोड़ नहीं पाए।"[05]

मैना विद्रोही और क्रांतिकारी नारी पात्र है, उसके आगे एक पुरुष की बोलती भी बंद हो जाती है, जो अक्सर मैना को बुरा भला कहता है। एक अकेली स्त्री के अभाव का फायदा उठाने वाले समाज की क्रूरता का भयावह वर्णन संजीव इस उपन्यास के प्रारम्भ में ही करते हैं। झूठे केस में मैना को जेल भेज दिया जाता है और उसके साथ बलात्कार करके बच्चा पैदा किया जाता है। भ्रष्ट समाज से लड़ती हुई मैना अपनी प्रगतिशील विचारधारा का परिचय देती है। संजीव महेन्दर बाबू द्वारा मैना के चारित्रिक गुणों का बखान करते हैं और समाज में एक भ्रष्टसत्ता और शोषण के विरुद्ध एक नारी की आवाज को बुलंद करते दिखलाते हैं। "महेन्दर बाबू ने ग्लास की आखिरी बूँद को घूंटते हुए कहा, "आप लोग समझते क्यों नहीं, मैं इस औरत के रहते इस इलाके में कोई भी काम नहीं कर सकता। ऐसी औरत मैंने देखी नहीं जो बाप और मर्द को दलाल कहकर छोड़ दे।"[06]

'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास थारु आदिवासियों के शोषण और संघर्ष की कहानी है। समाज और शासन-प्रशासन के शोषण के कारण थारु आदिवासियों का डाकू बन जाना और अन्याय के खिलाफ आवाज उठाना इस उपन्यास केन्द्रीय विषय है। सामंती व्यवस्था के द्वारा काली और उनके परिवार के साथ हुए अन्याय का मार्मिक दृश्य उभारा गया है। समाज में प्रतिष्ठित सामंत तथा महाजन द्वारा किए गए शोषण की सुनवाई में हार, छोटी जाति और मजदूर वर्ग की होती है। इस उपन्यास में संजीव पंचायती न्याय व्यवस्था में शोषित फेंकन का चित्रण करते हैं और समाज की खोखली न्याय व्यवस्था तथा सामंतवाद का पर्दाफाश करते हैं। "मगर यह उस दिन का दृश्य था, इस घटना के तीसरे दिन तक उनका स्याह चेहरा फिर से जस-का-तस हो उठा था। पंचायत भी बैठी थी, पंचायत ने एक स्वर से यह फैसला दिया की 'पांडे या उनके साले ऊँची जात के आदमी फेंकन बहू जैसी नीच जाति के साथ यह कर्म कर ही नहीं सकते।"[07]

संजीव अपने उपन्यासों में पिछड़े, गरीब, शोषित वर्ग के साथ खड़े हुए उनकी आवाज बनते हैं। लेखक संजीव समाज के ढोंगी व पाखंडी व्यक्तियों पर तथा उनकी कूटनीतिक विचारों व कारनामों पर अपनी लेखनी के द्वारा शोषण कि विरुद्ध आवाज उठाते हैं। इनके कई उपन्यासों में सामाजिक बुराइयों पर प्रकाश डालते हुए जनता कि आवाज बनते हुवे उन्हे देखा गया है। 'पाँव तले कि दूब' उपन्यास में पाँच पहाड़ क्षेत्र का वर्णन करते हैं। इस क्षेत्र में निरीह ग्रामीण आदिवासी, उनकी अशिक्षा, गरीबी, शोषण का यथार्थ वर्णन किया गया है। लेखक सुदीप्त नामक पात्र का वर्णन करते हैं जो शिक्षित है, जो इन ग्रामीण आदिवासियों के शोषण के खिलाफ आवाज उठता है। बिजली साहब के रूप में जाने जाना वाला सुदीप्त बचपन से आदर्श के साथ जीवन जीता आया है, जो अपने पिता द्वारा हलवाहों, चरवाहों और मजदूरों पर किए जाने वाले अत्याचार को देखकर विरोध करता है। सुदीप्त जैसे पात्र जो समाज में बदलाव लाना चाहतें हैं और समाजोत्थान कि प्रक्रिया में पूरा जीवन खत्म कर जाते हैं उनका महत्व समाज बड़ी देर से समझता है। लेखक अपने पात्रों में प्रतिरोध के स्वर भरते हुए सामाजिक न्यायिक व्यवस्था का चित्र उभारते हैं, जहाँ सम्पूर्ण शोषित वर्ग शोषण का शिकार हैं। सुदीप्त जिसका

अंत हो जाता है और आदिवासी उसका महत्व नहीं समझ पाते। "आदिवासियों को सुदीप्त के विरोध में खड़ा करने में विभिन्न शक्तियाँ सफल हुई। अंततः मेझिया के लोगों ने जब उसका महत्व पहचाना, तब तक वह इस संसार से विदा हो चुका था। व्यंजना यह है कि चाहे दिक्कू, अपने हितैषियों को बहुत देर से पहचानते हैं। यह व्यक्ति से लेकर पूरे देश कि त्रासदी है।"[08] मेझिया आदिवासियों के शोषण और अंधविश्वास का संजीव वर्णन करते हैं, जहाँ मंगरी देवी नामक आदिवासी स्त्री के साथ डायन कहकर मार-पीट का भयावह चित्र प्रस्तुत किया गया है। लेखक संजीव आदिवासियों के जीवन संघर्ष को लेकर सामाजिक शोषण का वर्णन करते हैं और इनके खिलाफ आवाज उठाने वाले पात्रों का निर्माण करते हैं। लेखक सुदीप्त के माध्यम से समाज की उपेक्षा और कुंठा का परिचय देते हैं। सुदीप्त जैसे प्रतिनिधि पात्र समाज हित में अपना सर्वस्व लूटा जाते हैं परंतु अपनी निजी जिंदगी में अकेले रह जाते हैं। गाँव में सामंती व्यवस्था और ग्रामीण परिवर्तन का दृश्य प्रस्तुत करते हैं- "मैं तो जनता की राय को तरजीह देता हूँ...मुश्किल क्या है, वह भी सामंती अवशेषों की मारी हुई है। गाँव बदला तो है, पर यह बदलाव क्या है- विचित्र ढंग की कुंठा का काकटेल। पिता के लिए मैं अब भी नाकारा हूँ, कारण- सारे पैसे यहाँ के लोगों में बाँट देता हूँ।"[09]

संजीव अपने उपन्यासों में समाज की तत्कालीन स्थितियों-परिस्थियों को उभारने का अथक प्रयास करते हैं। सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था चक्र में शोषण के विभिन्न पहलुओं को बड़ी बारीकी से पेश करतें हैं। ब्राह्मणवाद, सामंतवाद, पंचायती व्यवस्था का अन्याय सब पर बारीक दृष्टि संजीव द्वारा डाली गई है। लेखक समाज में लोगों की मानसिकता का परिचय देते हुए मानसिक गुलामी के संबंध में प्रत्यंचा उपन्यास में लिखते हैं कि- "राजनीतिक गुलामी से भी त्रासद होती है सामाजिक गुलामी।"[10] सामाजिक जागरूकता और समाजोत्थान कि चाह तथा लोगों में शोषण के विरुद्ध क्रांति कि भावना इनके उपन्यासों में स्वतः ही दृष्टिगोचर होती है।

निष्कर्ष

वरिष्ठ कथाकार संजीव समकालीन दौर के बहुप्रतिष्ठित साहित्यकार हैं। इनके उपन्यासों में मानव जीवन की तमाम विसंगतियों को बखूबी उभारने का अथक प्रयास देखा जाता है। हिन्दी की चर्चित कृतियों की शृंखला में लेखक संजीव की कृतियाँ बेहद महत्वपूर्ण स्थान रखतीं हैं। इनके उपन्यासों मे वर्णित जीवन यथार्थ, सामाजिक व राजनीतिक कटुताएँ सामाजिक विषमताओं को लेकर प्रस्तुत होती हैं। शोषण विहीन समाज की कल्पना मार्क्सवादी, सामंतवादी विचारधारों से आ सकेगी। समाज मे समानता तथा आपसी भाईचारा का संबंध स्थापित करने के लिए परस्पर मानवीय मूल्यों पर विचार आवश्यक है। आज के दौर में घटती जा रही संवेदनशीलता का मर्म समझ एकता की भावना का होना अतिआवश्यक है। संजीव के पात्र तत्कालीन परिवेश की सामाजिक रूढ़ियों तथा मान्यताओं का खंडन करते हैं। संजीव के उपन्यासों में प्रगतिशील चेतना का स्पष्ट उदाहरण उनकी धार, सूत्रधार, प्रत्यंचा इत्यादि उपन्यासों में देखने मिलता है, जो समाज को एक नई दृष्टि प्रदान करता है। सामाजिक अवगुणों और शोषण के विरुद्ध उठाए जाने वाले कदम वर्तमान समाज में शिक्षा का संचार तथा नए सभ्य व शोषण विहीन समाज की स्थापना करेंगे। नारी और पुरुष में भेद करने वाली सामाजिक मानसिकता पर संजीव के उपन्यासों में वर्णित नारी पात्र सशक्त प्रतिरोध प्रस्तुत करते हैं तथा समाज में नारी के महत्व और उसके आत्मसम्मान को स्थापित करने का संदेश देते हैं।

संदर्भ-

1. काशिद, गिरीश. कथाकार संजीव. दिल्ली: शिल्पायन, संस्करण, 2019, पृष्ठ क्रमांक 265
2. संजीव. अहेर. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण, 2020, पृष्ठ क्रमांक 146
3. संजीव. सूत्रधार. दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, चौथा संस्करण, 2016, पृष्ठ क्रमांक 76
4. संजीव. प्रत्यंचा. दिल्ली: वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृष्ठ क्रमांक 84

5. काशिद, गिरीश. कथाकार संजीव. दिल्ली: शिल्पायन, संस्करण, 2019, पृष्ठ क्रमांक 291
6. संजीव. धार. दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, पहला संस्करण, 2018, पृष्ठ क्रमांक 71
7. संजीव. जंगल जहाँ शुरू होता है. दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, चौथा संस्करण, 2019 पृष्ठ क्रमांक 92
8. काशिद, गिरीश. कथाकार संजीव. दिल्ली: शिल्पायन, संस्करण, 2019, पृष्ठ क्रमांक 303
9. संजीव. पाँव तले की दूब. दिल्ली: बीकानेर: वाग्देवी प्रकाशन, संस्करण, 2016, पृष्ठ क्रमांक 76-77
10. संजीव. प्रत्यंचा. दिल्ली: वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, प्राक्कथन से